



उच्च न्यायालय इलाहाबाद
लखनऊ पीठ

रिट ए संख्या - 4306 वर्ष 2025

देवेन्द्र कुमार दीक्षित

.....याचिकाकर्ता(गण)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य द्वारा प्रमुख सचिव, राज्य नागरिक उड्डयन विभाग, लखनऊ और अन्य।

.....प्रत्यर्थी(गण)

अपीलकर्ता(गण) के अधिवक्ता : वैयक्तिक रूप से

प्रत्यर्थी(गण) के अधिवक्ता : मुख्य स्थायी अधिवक्ता

सुरक्षित दिनांक : 04.05.2026

उद्घोषित दिनांक : 12.06.2026

न्यायालय संख्या - 11

माननीय न्यायमूर्ति राजीव सिंह

1. प्रस्तुत प्रकरण माननीय मुख्य न्यायाधीश महोदय के आदेश दिनांक 28.04.2025 के माध्यम से नामित किया गया है।
2. याची (जो स्वयं उपस्थित हुए) तथा राज्य की ओर से विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता श्री पी.के. सिंह को सुना गया।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

3. यह याचिका निम्नलिखित प्रार्थना के साथ दाखिल की गई है:-

(i) उत्प्रेषण की प्रकृति का रिट, आदेश या निर्देश जारी किया जाए, जिसके द्वारा विपक्षी द्वारा पारित दिनांक 04/12/2002 के आक्षेपित निष्कासन आदेश, जो इस रिट याचिका के अनुलग्नक संख्या-2 के रूप में अंतर्विष्ट है, को अपास्त किया जाए।

(ii) परमादेश की प्रकृति का रिट, आदेश या निर्देश जारी किया जाए, जो विपक्षी को याचिकाकर्ता को उस पद पर, जो वह अपनी सेवाएँ समाप्त किए जाने से पूर्व धारण करता था, पुनःस्थापित करने तथा उसे उस पद का वेतन एवं अन्य सेवा लाभ भूतलक्षी प्रभाव से, याचिकाकर्ता को सेवा में निरंतर मानते हुए, संदत्त करने के लिए समादेशित करे।

(iii) यह आदेश पारित किया जाए कि इस बात की जांच संस्थित की जाए कि आक्षेपित आदेश पर किसने हस्ताक्षर किए हैं और आक्षेपित आदेश की मूल प्रति कहाँ है तथा इसे संबंधित कर्मचारी/आवेदक-याचिकाकर्ता पर क्यों नहीं तामील कराया गया है।

(iv) इस माननीय न्यायालय की निगरानी के अधीन अथवा पूरे मामले को सीबीआई को सौंपते हुए एक उच्च स्तरीय जांच संस्थित करने का आदेश पारित किया जाए, ताकि उन अधिकारी/अधिकारियों की उत्तरदायित्व का निर्धारण करने के लिए निष्पक्ष, उचित और न्यायसंगत जांच की जा सके, जिन्होंने जाली, कूटरचित एवं मनगढ़ंत तथ्यों और दस्तावेजों को तैयार किया, और इस माननीय न्यायालय के 22 वर्ष का समय व्यर्थ किया तथा बिना किसी विधिक कारण के आवेदक-याचिकाकर्ता और उसके परिवार के सदस्यों को प्रताड़ित एवं परेशान किया तथा उनके करियर और जीवन को क्षति पहुँचाई।

4. शपथ-पत्रों का आदान-प्रदान पहले ही हो चुका है, इसलिए पक्षकारों को सुनने के पश्चात प्रकरण का निर्णय किया जा रहा है।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

5. विद्वान अपर मुख्य स्थायीय अधिवक्ता, श्री पी.के. सिंह ने याचिका की पोषणीयता पर प्रारंभिक आपत्ति उठाई है। उन्होंने तर्क प्रस्तुत किया है कि निदेशक महोदय, नागरिक विमानन विभाग, उत्तर प्रदेश, लखनऊ द्वारा पारित आदेश संख्या 4498-99/मामा०उ०/महाहा०/व्य०पत्रात्रा० दिनांक 04.12.2002 को पूर्व में इस न्यायालय के समक्ष रिट याचिका (एस/एस) संख्या 7191 सन 2002 में चुनौती दी जा चुकी है। आक्षेपित निष्कासन आदेश में “दिसंबर” के स्थान पर “नवंबर” महीना टंकित हो गया था और इसे दिनांक 09.12.2002 के शुद्धि-पत्र के माध्यम से सुधार दिया गया था। किंतु उपर्युक्त याचिका में प्रार्थना खंड में 04.11.2002 उल्लिखित था और आक्षेपित आदेश की तिथि 04.11.2002 उल्लिखित की गई थी। आक्षेपित निष्कासन आदेश की सत्यता पर उपर्युक्त याचिका में रिट न्यायालय द्वारा विचार किया गया था और उक्त याचिका दिनांक 17.02.2021 के आदेश द्वारा खारिज कर दी गई थी। व्यथित होकर, याचिकाकर्ता ने दिनांक 17.02.2021 के आदेश को विशेष अपील संख्या 255 सन 2021 में चुनौती दी और उक्त अपील दिनांक 27.04.2022 के निर्णय एवं आदेश के माध्यम से खारिज कर दी गई। अपीलीय आदेश के प्रस्तर 2 में खंडपीठ द्वारा यह प्रेक्षित किया गया था कि रिट याचिका में आक्षेपित आदेश दिनांक 04.11.2002 का था (सही तिथि 04.12.2002 है)।

5.1. यह भी तर्क प्रस्तुत किया गया है कि तत्पश्चात, खंडपीठ द्वारा विशेष अपील संख्या 255 सन 2021 में पारित दिनांक 27.04.2022 के आदेश की पुनर्विलोकन याचिका याचिकाकर्ता द्वारा दाखिल की गई थी, जिसे दिनांक 25.08.2023 को खारिज कर दिया गया था। अतः, वर्तमान याचिका पोषणीय नहीं है, जो प्रांगन्याय (रेस जुडिकेटा) के साथ-साथ इलाहाबाद उच्च न्यायालय नियममावली के अध्याय XXII का नियम 7 से बाधित है।

5.2. **फॉरवर्ड कंस्ट्रक्शन कंपनी बनाम प्रभात मंडल (पंजीकृत) एआईआर 1986 एससी 391** के वाद में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर विश्वास व्यक्त करते हुए, विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता द्वारा आगे यह भी तर्क प्रस्तुत किया गया है कि दिनांक 30.04.2016 की शिकायत के आधार पर याचिकाकर्ता के विरुद्ध अवमानना आवेदन (आपराधिक) संख्या 1202 सन 2006 (उत्तर प्रदेश राज्य बनाम देवेंद्र कुमार दीक्षित) पंजीकृत

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

कर एक आपराधिक अवमानना भी संस्थित की गई थी, और उक्त अवमानना आवेदन में दिनांक 24.03.2025 के निर्णय एवं आदेश के माध्यम से याचिकाकर्ता को 2,000/- रुपये का जुर्माना आरोपित करते हुए दोषी ठहराया गया था। अतः यह तर्क था कि वर्तमान याचिका विधिक प्रावधानों का घोर दुरुपयोग है, इसलिए वर्तमान याचिका भारी हर्जाने के साथ खारिज की जा सकती है।

6. याचिकाकर्ता द्वारा तर्क प्रस्तुत किया गया है कि निष्कासन आदेश अधिकारियों द्वारा अत्यंत लापरवाह और यांत्रिक तरीके से पारित किया गया था, और दंड आदेश की तिथि के संबंध में स्वीकारोक्ति है। एक आदेश में यह उल्लेख है कि आदेश दिनांक 04.11.2002 का है, किंतु दूसरे आदेश में “नवंबर” शब्द को काटकर 4 दिसंबर, 2002 के रूप में उल्लिखित किया गया है।

7. एक विशिष्ट प्रश्न पूछा गया था कि क्या पूर्व की याचिका में चुनौती दिए गए दिनांक 04.11.2002 के आदेश का शब्दशः पाठ, वर्तमान याचिका में चुनौती दिए गए आदेश के समान है। इसके उत्तर में याचिकाकर्ता ने इस तथ्य से इंकार नहीं किया कि पूर्व याचिका खारिज कर दी गई थी, तत्पश्चात उसने वर्तमान याचिका को प्राथमिकता दी और विशेष अपील में पारित निर्णय के प्रस्तर 2 में संशोधित निष्कासन आदेश दिनांक 04.12.2002 पर चर्चा की गई थी। अतः, विपक्षी के विद्वान अधिवक्ता की आपत्ति अस्वीकार किए जाने योग्य है।

8. पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्कों पर विचार करते हुए तथा याचिका की अंतर्वस्तु के साथ-साथ अन्य प्रासंगिक दस्तावेजों का अवलोकन करने से यह स्पष्ट है कि आक्षेपित आदेश संख्या 4498-99/मामा०३०/महाहा०/व्य०पत्रात्रा०, दिनांक 04.11.2002 (सही तिथि 4.12.2002) को याचिकाकर्ता द्वारा रिट याचिका संख्या 7191 सन 2002 में चुनौती दी गई थी और उक्त याचिका दिनांक 17.02.2021 के आदेश के माध्यम से खारिज कर दी गई थी। तत्पश्चात, उपर्युक्त आदेश को याचिकाकर्ता द्वारा खंडपीठ के समक्ष विशेष अपील संख्या 255 सन 2002 में चुनौती दी गई थी, और उपर्युक्त विशेष अपील दिनांक 27.04.2022 के आदेश के माध्यम से निर्णित की गई थी। उपर्युक्त

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है।

समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

विशेष अपील का निर्णय करते समय प्रस्तर 2 में यह प्रेक्षित किया गया है कि आदेश दिनांक 04.11.2002 (सही तिथि 04.12.2002 है)।

8.1. रिट याचिका (एस/एस) संख्या 7191 सन 2002 में पारित दिनांक 17.02.2021 का आदेश इस प्रकार है:-

"1. वर्तमान रिट याचिका याचिकाकर्ता द्वारा दिनांक 04.11.2002 के उस आदेश को चुनौती देते हुए दाखिल की गई है जिसके द्वारा याचिकाकर्ता को प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा सेवा से हटा दिया गया था।

2. मैंने याचिकाकर्ता को सुना, जो स्वयं उपस्थित हुए, तथा राज्य-प्रत्यर्थी के लिए विद्वान स्थायी अधिवक्ता की सहायता से विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री जयदीप नारायण माथुर को सुना।

3. प्रारम्भ में ही विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री जयदीप नारायण माथुर ने इस न्यायालय का ध्यान इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 15.10.2019 के आदेश की ओर आकर्षित किया है जो इस प्रकार है: "श्री देवेंद्र कुमार दीक्षित, जो स्वयं उपस्थित हैं, ने बहस के कुछ समय पश्चात अपनी बहस को दण्ड के भाग तक सीमित कर दिया। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री जयदीप नारायण माथुर ने भी अपनी बहस को दंडाधिकारी द्वारा दिए गए दण्ड तक सीमित रखने का अनुरोध किया है। 17.10.2010 को सूचीबद्ध करें।"

4. अतः वे कथन करते हैं कि तर्क मात्र दंड की मात्रा के संबंध में हो सकता है और याचिकाकर्ता द्वारा दाखिल विभिन्न आवेदनों पर इस न्यायालय द्वारा पारित कई आदेशों का संदर्भ देते हैं। याचिकाकर्ता जो स्वयं उपस्थित हैं, राज्य-प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता के तर्कों से इंकार नहीं करते हैं। वे न्यायालय से अनुरोध करते हैं कि प्रकरण के तथ्यों और परिस्थितियों का अवलोकन करने के पश्चात प्रकरण के उक्त पहलू पर भी विचार किया जाए। याचिकाकर्ता ने अपने प्रकरण के समर्थन में कोई न्यायदृष्टान्त (निर्णय नजीर) भी प्रस्तुत नहीं किया

है। राज्य-प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता का तर्क है कि विभाग में पूर्व में तथा अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

वर्तमान रिट याचिका दाखिल करने के पश्चात भी याचिकाकर्ता का आचरण ऐसा रहा है कि वह इस न्यायालय से किसी अनुग्रह का पात्र नहीं है।

5. आक्षेपित आदेश दिनांक 04.11.2002, एक जाँच आयोजित करने के पश्चात, प्रत्यर्थी संख्या 2, निदेशक-जनरल, राज्य नागरिक विमानन विभाग, लखनऊ, उ.प्र. द्वारा पारित किया गया है। याचिकाकर्ता के विरुद्ध आरोप यह था कि उसने अपने वरिष्ठ के विरुद्ध दुर्व्यवहार किया और अपमानजनक भाषा का प्रयोग किया। आक्षेपित आदेश, उसे आरोप का दोषी पाते हुए, यह भी टिप्पणी करता है कि वर्ष 1988 में उसने अपनी गलती के लिए क्षमा माँगी थी जिसे सम्यक रूप से स्वीकार कर लिया गया था और उसके पश्चात भी उसके आचरण के लिए उसे चेतावनी दी गई थी और कई लघु शास्तियां प्रदान की गई थीं किंतु उसके आचरण में सुधार नहीं हुआ है और इस प्रकार उसके विरुद्ध निष्कासन का आक्षेपित आदेश पारित किया गया है।

6. वर्तमान रिट याचिका में, आक्षेपित आदेश को पूर्वाग्रह, स्वेच्छाचारिता, प्रक्रियात्मक अनियमितता और अन्य अवैधताओं के आधार पर चुनौती दी गई थी। लगभग 12 वर्षों के पश्चात, अर्थात् 09.05.2014 को, पहली बार याचिकाकर्ता ने एक अनुपूरक शपथ-पत्र दाखिल किया और यह आधार उठाया कि आक्षेपित आदेश के अंत में आदेश पर हस्ताक्षर करने वाले अधिकारी के रूप में श्री प्रदीप कुमार का नाम टंकित है किंतु सुसंगत समय पर राज्य नागरिक विमानन विभाग के महानिदेशक के पद को धारण करने वाले श्री प्रदीप कुमार नहीं थे और श्री प्रदीप शुक्ला थे जो राज्य नागरिक विमानन विभाग के महानिदेशक थे। अतः, आक्षेपित आदेश को पद धारण करने वाले व्यक्ति द्वारा पारित हुआ नहीं कहा जा सकता है। अनुपूरक शपथ-पत्र के उत्तर में दिनांक 21.07.2014 को दायर अनुपूरक प्रति-शपथ-पत्र में यह विशिष्ट रूप से कथन किया गया है कि आक्षेपित दण्ड आदेश श्री प्रदीप शुक्ला द्वारा हस्ताक्षरित है और टंकण त्रुटि के कारण, श्री प्रदीप शुक्ला का नाम गलती से श्री प्रदीप कुमार के रूप में प्रदर्शित हो गया है। सुसंगत समय पर, श्री प्रदीप शुक्ला, सचिव,

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

नागरिक विमानन विभाग थे और शासकीय आदेश दिनांक 20.06.2001 के माध्यम से, जिसकी एक प्रति अनुलग्नक-एससीए-2 के रूप में दाखिल की गई है, नागरिक विमानन निदेशालय, उ.प्र. के निदेशक-जनरल का पदेन प्रभार भी संभाल रहे थे। तथापि, किसी भी विवाद से बचने के लिए इस न्यायालय ने दिनांक 27.04.2015 के आदेश द्वारा श्री प्रदीप शुक्ला को अपना व्यक्तिगत शपथ-पत्र दाखिल करने की अपेक्षा की। ऐसा शपथ-पत्र श्री प्रदीप शुक्ला द्वारा 15.05.2015 को दाखिल किया गया था और प्रस्तर 3 तथा 4 में वे श्रेणीबद्ध रूप से कथन करते हैं कि उन्होंने आक्षेपित आदेश दिनांक 04.11.2002 के संबंध में मूल अभिलेखों को देख लिया है और यह कि उक्त आक्षेपित आदेश दिनांक 04.11.2002 उत्तर प्रदेश राज्य के निदेशक-जनरल, नागरिक विमानन के रूप में उनकी क्षमता में उनके हस्ताक्षर के अधीन विधिवत पारित किया गया था। वे यह भी कथन करते हैं कि त्रुटिवश उनका नाम प्रदीप शुक्ला के स्थान पर गलती से प्रदीप कुमार टंकित हो गया है।

7. उपर्युक्त परिस्थितियों में विवाद का अंत वहीं हो जाना चाहिए था किंतु 01.07.2015 को, याचिकाकर्ता ने श्री प्रदीप शुक्ला को यह अभिकथन करते हुए समन करने के लिए एक आवेदन दाखिल किया कि श्री प्रदीप शुक्ला का शपथ-पत्र कूटकृत और गढ़ा हुआ है। उक्त आवेदन इस न्यायालय द्वारा दिनांक 03.07.2015 के आदेश के माध्यम से खारिज कर दिया गया था। याचिकाकर्ता ने तत्पश्चात न्यायालय के समक्ष पुनः बेबुनियाद आरोप लगाते हुए दिनांक 03.07.2015 के आदेश के प्रत्याह्वान के लिए एक अन्य आवेदन दाखिल किया। उक्त प्रत्याह्वान आवेदन भी इस न्यायालय द्वारा 10,000/- रुपये के हर्जाने के साथ दिनांक 29.02.2016 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था। याचिकाकर्ता ने पुनः एक हस्तलेख विशेषज्ञ द्वारा श्री प्रदीप शुक्ला के हस्ताक्षर के सत्यापन की मांग करते हुए एक आवेदन दाखिल किया। उक्त आवेदन भी दिनांक 18.07.2017 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था। आश्चर्यजनक रूप से, उसके पश्चात याचिकाकर्ता ने श्री प्रदीप शुक्ला के दिनांक 15.05.2015

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

के शपथ-पत्र के कथित समन में जाँच के लिए दण्ड प्रक्रिया संहिता की धारा 340 के अंतर्गत एक आवेदन प्रस्तुत किया। न्यायालय ने यह धारित करते हुए कि चूँकि रिट याचिका अभी भी लंबित है, धारा 340 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत आवेदन समयपूर्व है और इस प्रक्रम पर किसी आदेश की मांग नहीं करता है। 22.03.2018 को मामले को सुनवाई के लिए सूचीबद्ध किया गया था और याचिकाकर्ता जो न्यायालय में उपस्थित था, ने प्रकरण पर बहस करने से इंकार कर दिया, अतः, उसके इंकार को नोट करते हुए अभियोजन के अभाव में याचिका खारिज कर दी गई थी। उसके आवेदन पर 08.08.2018 को मामले को पुनर्स्थापित किया गया था। पुनः याचिकाकर्ता ने धारा 340 दण्ड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत दाखिल अपने पूर्ववर्ती आवेदन के समर्थन में एक अनुपूरक शपथ-पत्र के साथ एक अन्य आवेदन दाखिल किया। उक्त आवेदन न्यायालय द्वारा दिनांक 04.12.2018 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था। दिनांक 04.12.2002 का आदेश पारित करते समय इस न्यायालय ने श्री प्रदीप शुक्ला द्वारा दाखिल शपथ-पत्र के संबंध में अपनी संतुष्टि नोट की। प्रकरण पर 15.10.2019 को सुनवाई की गई थी और याचिकाकर्ता ने विस्तार से प्रकरण पर बहस करने के पश्चात अपनी बहस के दायरे को केवल सजा की मात्रा तक सीमित रखने पर सहमति व्यक्त की थी। उक्त तथ्य न्यायालय द्वारा नोट किया गया था और सुनवाई के लिए पुनः तिथि निर्धारित की गई थी। इसके पश्चात मामले को बार-बार सूचीबद्ध किया गया था किंतु निष्कर्ष पर नहीं पहुँचा जा सका। इस प्रकार प्रकरण इस न्यायालय के समक्ष आया है।

8. आक्षेपित आदेश दिनांक 04.11.2002 तथा श्री प्रदीप शुक्ला द्वारा दिनांक 15.05.2015 को दाखिल शपथ-पत्र के साथ-साथ इस न्यायालय द्वारा पारित बार-बार के आदेशों का अवलोकन करने के पश्चात, यह न्यायालय इस बात से संतुष्ट है कि आक्षेपित आदेश श्री प्रदीप शुक्ला द्वारा पारित किया गया है और उनके नाम का प्रदीप कुमार के रूप में उल्लेख किया जाना और कुछ नहीं अपितु एक टंकण त्रुटि है।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

9. याचिकाकर्ता द्वारा न तो विभागीय कार्यवाही में कोई प्रक्रियात्मक अनियमितता इंगित की गई है और न ही आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता इंगित की गई है। मैंने आक्षेपित आदेश का अवलोकन किया है जो एक विस्तृत आदेश है। यह याचिकाकर्ता के आचरण, जिसके लिए उसे आरोप-पत्र दिया गया था, के साथ-साथ उसके पूर्ववर्ती आचरण और दण्ड आदेशों को विस्तार से नोट करता है। याचिकाकर्ता द्वारा प्रस्तुत किए गए बचाव और प्रस्तुत साक्ष्य पर भी विस्तार से विचार किया गया है। चूंकि याचिकाकर्ता द्वारा कोई अवैधता या अनियमितता इंगित नहीं की गई है और न ही इस न्यायालय द्वारा पाई गई है, अतः आक्षेपित आदेश में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

10. जहाँ तक सजा की मात्रा के प्रश्न का संबंध है, प्रतिवादी-विभाग के साथ सेवा के दौरान याचिकाकर्ता के पिछले आचरण, उसके आचरण जिसके लिए उसे आरोप-पत्र दिया गया था, के साथ-साथ इस न्यायालय के समक्ष उसके आचरण को देखते हुए, याचिकाकर्ता के पक्ष में, साम्या या विधि में, कोई मामला नहीं बनता है। यह स्पष्ट है, जो इस न्यायालय के समक्ष उसके आचरण से अधिक स्पष्ट होता है, कि याचिकाकर्ता स्वभाव से झगड़ालू है। वह बिना किसी आधार के अनुचित आधार प्रस्तुत करता है, जो इस न्यायालय के समक्ष दाखिल बार-बार के आवेदनों के साथ-साथ आक्षेपित आदेश में नोट किए गए उसके आचरण में भी झलकता है। यह न्यायालय यह धारित करने में असमर्थ है कि ऐसे व्यक्ति को सरकारी सेवा में बने रहने की अनुमति दी जानी चाहिए। वह केवल विभाग के वातावरण को दूषित करेगा, जैसा कि उसने न्यायालय में बार-बार किया है। न्यायालय द्वारा भारी हर्जाना आरोपित किया जाना भी उसे अनुचित होने से नहीं रोक सका। अतः, यह न्यायालय दंड की मात्रा में भी हस्तक्षेप करने के लिए इच्छुक नहीं है।

11. रिट याचिका खारिज की जाती है।"

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

8.2. खंडपीठ द्वारा विशेष अपील संख्या 255 सन 2002 में पारित दिनांक 27.04.2022 का आदेश इस प्रकार है:

"01. यह अंतः-न्यायालय अपील श्री देवेंद्र कुमार दीक्षित, अपीलार्थी द्वारा, जो स्वयं उपस्थित हैं, रिट न्यायालय द्वारा रिट याचिका संख्या 7191 (एस/एस) सन 2002 (देवेंद्र कुमार दीक्षित बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य) में पारित आक्षेपित निर्णय एवं आदेश दिनांक 17.02.2021 से व्यथित होकर प्रस्तुत की गई है, जिसके द्वारा अपीलार्थी द्वारा अपने दण्ड आदेश को चुनौती देते हुए दाखिल की गई रिट याचिका खारिज कर दी गई है।

2. अपीलार्थी ने दिनांक 04.11.2002 (सही तिथि 04.12.2002 है) के आदेश को चुनौती दी थी जिसके द्वारा अपीलार्थी को अनुशासनहीनता, दुर्यवहार और अपने वरिष्ठ के विरुद्ध अपमानजनक भाषा के प्रयोग के आधार पर सेवा से हटा दिया गया था।

3. एक सम्यक जांच संस्थित की गई थी जिसमें अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप विधिवत सिद्ध पाए गए थे। जांच आख्या की एक प्रति अपीलार्थी पर तामील कराई गई थी, जिसे जांच अधिकारी के निष्कर्षों के प्रति अपनी प्रतिक्रिया मांगते हुए एक कारण बताओ नोटिस भी जारी किया गया था जिस पर भी विचार किया गया था और तत्पश्चात राज्य नागरिक विमानन विभाग के उप-निदेशक ने पाया कि जांच अधिकारी द्वारा अभिलिखित निष्कर्ष अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के अनुरूप थे और साक्ष्य द्वारा विधिवत संपुष्ट थे और अपीलार्थी के विरुद्ध आरोपों पर विचार करते हुए उसके पिछले आचरण सहित जिसमें उसने अभद्रता की कई घटनाओं में लिप्त रहा था और प्रताड़ित किए जाने तथा लघु दण्ड आरोपित किए जाने के बावजूद उसके व्यवहार में कोई सुधार नहीं हुआ था, –और नागरिक उड्डयन विभाग में अनुशासन की अहमियत को देखते हुए (जिसका अपीलकर्ता में अभाव था), उसे सेवा से हटाने का आदेश जारी किया गया।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

4. अपीलार्थी ने स्वयं बहस करते हुए, रिट न्यायालय द्वारा पारित आदेश को मुख्य रूप से इस आधार पर चुनौती दी है कि विभाग द्वारा अपीलार्थी के विरुद्ध की गई जाँच दुर्भावनापूर्ण थी। विभाग द्वारा जाँच अधिकारी के समक्ष और रिट न्यायालय के समक्ष भी झूठे और मनगढ़ंत दस्तावेज़ प्रस्तुत किए गए थे। राज्य सरकार और विभाग ने अपीलार्थी को निशाना बनाया है और सेवा से हटाने का आदेश पारित कर दिया है, जबकि 24.01.2002 की कथित घटना मनगढ़ंत थी और वैसे भी ऐसा कोई साक्ष्य/सामग्री नहीं थी जिससे अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप सिद्ध होता हो और उसे सेवा से हटाया जा सके।

5. अपीलार्थी ने स्वयं उपस्थित होकर अपने लिखित तर्क (लिखित अभिवचन) भी दाखिल किए हैं जिन्हें अभिलेख पर ले लिया गया है। अपीलार्थी द्वारा दाखिल लिखित तर्कों के अवलोकन से यह संकेत मिलता है कि रिट न्यायालय के समक्ष कार्यवाही में पैरवी कर रहे राज्य के अधिवक्ता के अतिरिक्त विभिन्न विभागीय व्यक्तियों और उच्च अधिकारियों के विरुद्ध दुर्भावना के आरोप लगाए गए हैं, इसके अतिरिक्त विभागीय कार्रवाइयों को मनमाना होने तथा स्थापित नियमों के उल्लंघन के आधार पर भी चुनौती दी गई है।

6. अपीलार्थी ने सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय एस. नंबी नारायणन बनाम सिबी मैथ्यूज एवं अन्य, (2018) 10 एससीसी 804 पर भी विश्वास व्यक्त किया है (दृष्टिकोण रखा है) और यह कहा है कि उक्त प्रकरण में प्रतिपादित सिद्धांत अपीलार्थी के प्रकरण पर पूर्ण रूप से लागू होता है। यह भी कथन किया गया है कि राज्य ने अपीलार्थी की ईमानदारी के लिए उसे दंडित करने का प्रयास किया है, जिसने विभाग में भ्रष्टाचार का पर्दाफाश किया था जिससे वरिष्ठ अधिकारी नाराज़ हो गए थे, जिसके परिणामस्वरूप दुर्भावना से प्रेरित होकर दंडात्मक आदेश पारित किया गया है, अतः रिट न्यायालय द्वारा पारित आदेश को अपास्त करते हुए अपील और रिट याचिका स्वीकृत किए जाने योग्य है।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

7. दूसरी ओर, राज्य-प्रत्यर्थीगण के विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता ने तर्कों का खंडन करते हुए न्यायालय का ध्यान प्रतिशपथ पत्र की ओर आकर्षित किया है, जिसमें यह दर्शाया गया है कि 24.01.2002 को अपने उच्च अधिकारी के विरुद्ध अपीलार्थी द्वारा दुर्यवहार किए जाने तथा अभद्र भाषा का प्रयोग करने की घटना के दृष्टिगत, अपीलार्थी को 30.01.2002 को निलंबित कर दिया गया था और विधिवत एक जाँच अधिकारी नियुक्त किया गया था। अपीलार्थी के विरुद्ध लगाए गए आरोपों के विवरण वाली दिनांक 02.02.2002 की (चार्ज-शीट) आरोप-पत्र उसे 06.02.2002 को तामील कराई गई थी। अपीलार्थी को विभागीय जाँच में भाग लेने का पूर्ण अवसर प्रदान किया गया और प्रत्येक चरण पर उसे आवश्यक दस्तावेज तथा सामग्रियाँ उपलब्ध कराई गईं ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि अपीलार्थी को किसी प्रकार की प्रतिकूलता का सामना न करना पड़े। यद्यपि, अपीलार्थी ने इस स्वतंत्रता का दुरुपयोग किया क्योंकि उसने जाँच अधिकारी को हटाने के लिए आवेदन देने सहित जाँच अधिकारी पर भी आरोप लगाए। तथापि, जाँच पूर्ण कर ली गई और अपीलार्थी के विरुद्ध लगाए गए आरोप सिद्ध पाए गए। दिनांक 06.08.2002 की जाँच आख्या अपीलार्थी को तामील कराई गई, जिससे यह अपेक्षा की गई थी कि वह निष्कर्षों को स्वीकार किए जाने तथा सेवा से हटाने के प्रस्तावित दंड के संबंध में दिनांक 26.10.2002 के कारण बताओ नोटिस का उत्तर दे। इस स्तर पर भी अपीलार्थी ने मात्र विभाग के उच्च अधिकारियों तथा जाँच से जुड़े पदाधिकारियों को असहज करने (लज्जित करने) के लिए आपत्तियाँ उठाई और आरोप लगाए। अनुशासनिक प्राधिकारी ने पाया कि जाँच अधिकारी के निष्कर्ष अभिलेख पर मौजूद बयानों और साक्ष्यों से पूरी तरह संपुष्ट थे तथा पिछले आचरण पर विचार करते हुए, जिसमें कई अवसरों पर लघु शास्ति प्रदान किया जाना शामिल था, अपीलार्थी को सेवा से हटा दिया गया।

8. विद्वान अपर मुख्य स्थायी अधिवक्ता ने यह भी तर्क प्रस्तुत किया कि अपीलार्थी ने विभाग के उच्च अधिकारियों के विरुद्ध ही नहीं, अपितु न्यायालय के माननीय न्यायमूर्तिगण तथा जाँच से जुड़े प्रत्येक व्यक्ति के विरुद्ध अपने

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

रिश्तेदारों के माध्यम से कई रिट याचिकाएँ दाखिल की थीं, परन्तु सभी रिट याचिकाओं को खारिज कर दिया गया और कुछ मामलों में अपीलार्थी पर हर्जाना भी अधिरोपित किया गया।

9. उपर्युक्त परिस्थितियों में यह तर्क प्रस्तुत किया गया है कि जहाँ अपीलार्थी जाँच की कार्यवाही में कोई मूलभूत त्रुटि स्थापित करने में असमर्थ रहा है और जहाँ तक दंड की मात्रा का संबंध है, इसे उचित माना गया है, इसलिए यह न्यायालय न्यायिक पुनर्विलोकन की अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए विभागीय प्राधिकारियों के ऊपर एक अपीलीय न्यायालय की स्थिति धारित नहीं करेगा, अतः रिट न्यायालय द्वारा रिट याचिका को खारिज किया जाना ऐसी किसी त्रुटि से ग्रस्त नहीं है जिसके लिए इस न्यायालय द्वारा अपने अंतरा-न्यायालय अपीलीय अधिकार क्षेत्र (इंट्रा-कोर्ट अपीलीय ज्यूरिडिक्शन) के तहत हस्तक्षेप की आवश्यकता हो। तदनुसार, अपील योग्यता से रहित होने के कारण खारिज किए जाने योग्य है।

10. न्यायालय ने अपीलार्थी द्वारा स्वयं दिए गए तर्कों उनके द्वारा दाखिल लिखित तर्कों तथा राज्य-प्रत्यर्थागण के विद्वान अधिवक्ता के तर्कों पर विचार किया है और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का अवलोकन किया है।

11. इस न्यायालय के विचारार्थ दो बिंदु उत्पन्न होते हैं; (i) क्या विभागीय जाँच में कोई ऐसी प्रक्रियागत त्रुटि हुई है जिसने इसके परिणाम को मूलभूत रूप से प्रभावित किया है, (ii) क्या रिट न्यायालय द्वारा पारित आदेश में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता है।

12. जहाँ तक पहले बिंदु का संबंध है, अभिलेख से यह संकेत मिलता है कि अपीलार्थी नागरिक उड्डयन विभाग (डिपार्टमेंट ऑफ सिविल एविएशन) में लिपिक के रूप में कार्यरत था। 24.01.2002 को जब एक निरीक्षण चल रहा था, एक विमान निरीक्षक (एयरक्राफ्ट इंस्पेक्टर) ने एक सोफा और कालीन की माँग की थी। निरीक्षण के दौरान जब उच्च अधिकारी दौरा कर रहे थे, तो अपीलार्थी को बाद में आने के लिए कहा गया था। इसके उत्तर में अपीलार्थी ने उच्च अधिकारियों के

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

विरुद्ध अशोभनीय भाषा का प्रयोग किया तथा उनके साथ दुर्व्यवहार किया, जिससे बदतमीजी और अनुशासनहीनता का स्पष्ट संकेत मिलता है। अपीलार्थी को 30.01.2002 को निलंबित कर दिया गया था और 06.02.2002 को आरोप-पत्र तामील कराया गया था। अपीलार्थी ने उत्तर देने के लिए समय माँगा जो कि प्रदान किया गया था। अपीलार्थी ने अपना उत्तर दाखिल किया और उसके पश्चात साक्षियों के बयान दर्ज किए गए।

13. यह ध्यान रखना प्रासंगिक होगा कि प्रारम्भ में 22.08.2002 को अपीलार्थी के विरुद्ध सेवा से हटाने का आदेश पारित किया गया था, जिसके विरुद्ध अपीलार्थी ने रिट याचिका संख्या 4806 (एस/एस) वर्ष 2002 दाखिल की थी। रिट न्यायालय ने यह पाया कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध लगाए गए आरोपों पर विशिष्ट निष्कर्ष दर्ज किए बिना सेवा से हटाने का आदेश पारित कर दिया गया था जो कि त्रुटिपूर्ण था, परिणामस्वरूप उसे निरस्त एवं अपास्त कर दिया गया तथा विभाग को यह स्वतंत्रता प्रदान की गई कि वह अपीलार्थी को अभिलेखों का निरीक्षण करने की अनुमति देने के पश्चात, दिनांक 16.09.2002 के उक्त आदेश में की गई किसी भी टिप्पणी से प्रभावित हुए बिना अपीलार्थी के विरुद्ध आगे की कार्यवाही कर सकता है। दिनांक 16.09.2002 के आदेश का प्रासंगिक अंश इस प्रकार है:

“यह विवादित नहीं है कि प्रत्यर्थी संख्या 2 ने सेवा से हटाने का आदेश पारित करते हुए याचिकाकर्ता के विरुद्ध लगाए गए आरोपों पर कोई विशिष्ट निष्कर्ष दर्ज नहीं किया है। इसे देखते हुए, सेवा से हटाने का दिनांक 22.08.2002 का आदेश त्रुटिपूर्ण है और एतद्वारा निरस्त किया जाता है। महाधिवक्ता (एडवोकेट जनरल) का निवेदन है कि भविष्य में किसी भी आपति से बचने के लिए प्रत्यर्थीगण को याचिकाकर्ता को अभिलेख दिखाने में कोई आपति नहीं है। पक्षकार इस बात पर सहमत हैं कि याचिकाकर्ता 22.09.2002 को अभिलेखों का निरीक्षण कर सकता है और वह 04.10.2002 तक अपना आगे का उत्तर दाखिल कर

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

सकता है। इसके पश्चात प्रत्यर्थी संख्या 2 अपने आदेश में की गई किसी भी टिप्पणी से प्रभावित हुए बिना एक तर्कसंगत (कारणयुक्त) आदेश पारित कर सकता है।"

14. इसके पश्चात अनुशासनिक प्राधिकारी ने रिट याचिका संख्या 4806 (एस/एस) वर्ष 2002 में दिनांक 16.09.2002 को अपने आदेश में न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देशों का अनुपालन करने के बाद पूरे प्रकरण पर पुनर्विचार किया। जाँच अधिकारी की आख्या भी अपीलार्थी को तामील कराई गई थी और उसे जाँच अधिकारी द्वारा दिए गए निष्कर्षों के संबंध में अपना उत्तर प्रस्तुत करने के लिए दिनांक 26.10.2002 का कारण बताओ नोटिस भी जारी किया गया था। अपीलार्थी ने उत्तर देने के लिए समय माँगा और उसके पश्चात 27.11.2002 को अपना उत्तर दिया जिस पर अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा विचार किया गया और दिनांक 04.11.2002 के आदेश के माध्यम से अपीलार्थी को सेवा से हटा दिया गया। तत्पश्चात, दिनांक 09.12.2002 के एक शुद्धिपत्र द्वारा यह स्पष्ट किया गया कि सेवा से हटाने का आदेश 04.11.2002 का नहीं अपितु 04.12.2002 का है। सेवा से हटाने के इस आदेश को अपीलार्थी द्वारा रिट याचिका संख्या 7191 (एस/एस) वर्ष 2002 में चुनौती दी गई थी।

15. अपीलार्थी द्वारा उठाया गया मुख्य चुनौती का आधार पूर्वाग्रह, मनमानी और प्रक्रियागत अवैधता है। यद्यपि, जैसा कि अभिलेख से स्पष्ट होगा कि जहाँ तक प्रक्रियागत अवैधताओं का संबंध है, यह नहीं कहा जा सकता है कि अपीलार्थी को अपना पक्ष रखने का पर्याप्त अवसर नहीं दिया गया था या कोई पूर्वाग्रह उत्पन्न किया गया था क्योंकि सभी चरणों में अपीलार्थी को विधिवत नोटिस दिया गया था और उसे पर्याप्त अवसर प्रदान किए गए थे तथा उसने अपना उत्तर भी दाखिल किया था जिस पर जाँच अधिकारी के साथ-साथ अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा भी विधिवत विचार किया गया था। मामले का यह पहलू दंडात्मक आदेश से ही पूर्ण रूप से स्पष्ट है और अपीलार्थी इस बात का खंडन नहीं कर सका कि वह जाँच में भाग नहीं ले सका था और इस बात को रिट न्यायालय ने भी संज्ञान में लिया था

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

जिसमें यह अवलोकन किया गया था कि अपीलार्थी विभागीय कार्यवाही में किसी भी प्रक्रियागत अनियमितता को इंगित करने में असमर्थ रहा है।

16. विभागीय जाँचों के संबंध में न्यायिक समीक्षा के दायरे पर हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा डिप्टी जनरल मैनेजर (अपीलीय प्राधिकारी) एवं अन्य बनाम अजय कुमार श्रीवास्तव, (2021) 2 एससीसी 612 के प्रकरण में विचार किया गया है, जिसमें प्रस्तर 22 से 28 में दिए गए पूर्व के निर्णय का संज्ञान लेते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया है:-

"22. भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 या अनुच्छेद 32 या अनुच्छेद 136 के अंतर्गत संवैधानिक न्यायालयों द्वारा विभागीय/अपीलीय प्राधिकारियों द्वारा की गई कार्यवाहियों अर्थात् अनुशासनिक जाँच के मामलों में न्यायिक समीक्षा की शक्ति, विधि की त्रुटियों या प्रक्रियागत त्रुटियों को सुधारने की सीमाओं तक सीमित है, जिसके परिणामस्वरूप प्रत्यक्ष अन्याय या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का उल्लंघन होता है और यह एक अपीलीय प्राधिकारी के रूप में मामले के गुणदोष पर न्यायनिर्णयन के समान नहीं है, जिस पर पहले इस न्यायालय द्वारा तमिलनाडु राज्य बनाम टी.वी. वेणुगोपालन [तमिलनाडु राज्य बनाम टी.वी. वेणुगोपालन, (1994) 6 एससीसी 302 : 1994 एससीसी (एलएंडएस) 1385] में और बाद में तमिलनाडु राज्य बनाम ए. राजपांडियन [तमिलनाडु राज्य बनाम ए. राजपांडियन, (1995) 1 एससीसी 216 : 1995 एससीसी (एलएंडएस) 292] में परीक्षण किया गया था और इसके अतिरिक्त इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ द्वारा बी.सी. चतुर्वेदी बनाम भारत संघ [बी.सी. चतुर्वेदी बनाम भारत संघ, (1995) 6 एससीसी 749 : 1996 एससीसी (एलएंडएस) 80] में परीक्षण किया गया था, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है: (बी.सी. चतुर्वेदी मामला [बी.सी. चतुर्वेदी बनाम भारत संघ, (1995) 6 एससीसी 749 : 1996 एससीसी (एलएंडएस) 80], एससीसी पृष्ठ 759-60, प्रस्तर 13)

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

'13. अनुशासनिक प्राधिकारी तथ्यों का एकमात्र न्यायाधीश है। जहाँ अपील प्रस्तुत की जाती है, अपीलीय प्राधिकारी को साक्ष्य या दंड की प्रकृति का पुनर्मूल्यांकन करने की सह-विस्तृत शक्ति प्राप्त होती है। अनुशासनिक जाँच में, विधिक साक्ष्य के कठोर प्रमाण और उस साक्ष्य पर निष्कर्ष प्रासंगिक नहीं हैं। साक्ष्य की पर्याप्तता या साक्ष्य की विश्वसनीयता पर न्यायालय/अधिकरण के समक्ष बहस करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। भारत संघ बनाम एच.सी. गोयल [भारत संघ बनाम एच.सी. गोयल, (1964) 4 एससीआर 718 : एआईआर 1964 एससी 364] में इस न्यायालय ने एससीआर पृष्ठ 728 (एआईआर पृष्ठ 369, प्रस्तर 20) पर यह अभिनिर्धारित किया था कि यदि साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा प्राप्त किया गया निष्कर्ष विकृत है या अभिलेख के मुख पर प्रकट त्रुटि से ग्रस्त है या पूर्ण रूप से बिना किसी साक्ष्य के आधारित है, तो उत्प्रेषण रिट (रिट ऑफ सर्टिओरारी) जारी की जा सकती है।'''

23. इस न्यायालय के पश्चातवर्ती निर्णय अर्थात् एच.पी. एस.ई.बी. बनाम महेश डाहिया [एच.पी. एस.ई.बी. बनाम महेश डाहिया, (2017) 1 एससीसी 768 : (2017) 1 एससीसी (एलएंडएस) 297] में तथा हाल ही में इस न्यायालय की तीन-न्यायाधीशों की पीठ द्वारा प्रवीण कुमार बनाम भारत संघ [प्रवीण कुमार बनाम भारत संघ, (2020) 9 एससीसी 471 : (2021) 1 एससीसी (एलएंडएस) 103] में इसका लगातार पालन किया गया है।

24. अतः यह स्थापित है कि संवैधानिक न्यायालयों की न्यायिक समीक्षा की शक्ति, निर्णय लेने की प्रक्रिया (डिसीजन-मेकिंग प्रोसेस) का मूल्यांकन है न कि स्वयं निर्णय के गुणदोष का। इसका उद्देश्य आचरण में निष्पक्षता सुनिश्चित करना है, न कि निष्कर्ष की निष्पक्षता सुनिश्चित करना। न्यायालय/अधिकरण अपचारी कर्मचारी के विरुद्ध चलाई गई कार्यवाही में हस्तक्षेप कर सकता है यदि वह किसी भी प्रकार से प्राकृतिक न्याय के नियमों के असंगत है या जाँच के तरीके को निर्धारित करने वाले सांविधिक नियमों के उल्लंघन में है या जहाँ

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा पहुँचा गया निष्कर्ष या पाया गया निष्कर्ष बिना किसी साक्ष्य के आधारित है। यदि निष्कर्ष या पाया गया निष्कर्ष ऐसा है जिस पर कभी भी कोई विवेकशील व्यक्ति नहीं पहुँचता या जहाँ साक्ष्य पर विचार करने के पश्चात अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा पहुँचे गए निष्कर्ष विकृत हैं या अभिलेख के मुख पर प्रकट त्रुटि से ग्रस्त हैं या पूर्ण रूप से बिना किसी साक्ष्य के आधारित हैं, तो उत्प्रेषण रिट (रिट ऑफ सर्टिओरारी) जारी की जा सकती है। संक्षेप में कहें तो, न्यायिक समीक्षा के दायरे को तथ्य के एक मामले के रूप में किसी प्राधिकारी के निर्णय की शुद्धता या औचित्य की परीक्षा तक नहीं बढ़ाया जा सकता है।

25. जब लोक सेवक के विरुद्ध कथित कदाचार के लिए अनुशासनिक जाँच संचालित की जाती है, तो न्यायालय को निम्नलिखित की परीक्षा करनी होती है और उनका निर्धारण करना होता है:

- (i) क्या जाँच सक्षम प्राधिकारी द्वारा की गई थी;
- (ii) क्या प्राकृतिक न्याय के नियमों का अनुपालन किया गया है;
- (iii) क्या निष्कर्ष या परिणाम कुछ साक्ष्य पर आधारित हैं तथा प्राधिकारी के पास तथ्य का निष्कर्ष या परिणाम तक पहुँचने की शक्ति और अधिकार क्षेत्र (ज्यूरिडिक्शन) है।

26. यह सुस्थापित है कि जहाँ जाँच अधिकारी अनुशासनिक प्राधिकारी नहीं है, तो जाँच की आख्या प्राप्त होने पर अनुशासनिक प्राधिकारी पूर्ववर्ती द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्षों से सहमत हो सकता है या असहमत हो सकता है, असहमति के प्रकरण में अनुशासनिक प्राधिकारी को असहमति के कारण अभिलिखित करने होंगे और दोषी कर्मचारी को सुनवाई का अवसर प्रदान करने के पश्चात, यदि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य ऐसी कार्यवाही हेतु पर्याप्त हैं, तो वह अपने स्वयं के निष्कर्ष दर्ज कर सकता है अन्यथा प्रकरण को आगे की जाँच के लिए जाँच अधिकारी को वापस भेज सकता है।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

27. यह सत्य है कि साक्ष्य के कठोर नियम विभागीय जाँच की कार्यवाही पर लागू नहीं होते हैं। यद्यपि विधि की एकमात्र अपेक्षा यह है कि दोषी के विरुद्ध आरोप ऐसे साक्ष्य द्वारा स्थापित होने चाहिए जिस पर कार्रवाई करते हुए एक विवेकशील व्यक्ति जो बुद्धिमत्ता और निष्पक्षता से कार्य करता हो, दोषी कर्मचारी के विरुद्ध आरोप की गंभीरता को कायम रखने वाले निष्कर्ष पर पहुँच सके। यह सत्य है कि मात्र कयास या अनुमान विभागीय जाँच की कार्यवाही में भी दोषसिद्धि के निष्कर्ष को कायम नहीं रख सकते हैं।

28. संविधान के अनुच्छेद 226 या अनुच्छेद 136 के तहत न्यायिक समीक्षा के अपने अधिकारक्षेत्र का प्रयोग करते हुए संवैधानिक न्यायालय विभागीय जाँच की कार्यवाही में तथ्यों के आधार पर निकाले गए निष्कर्षों में तब तक हस्तक्षेप नहीं करेगा जब तक कि दुर्भावना या विकृतता का मामला न हो, अर्थात् जहाँ निष्कर्ष का समर्थन करने के लिए कोई साक्ष्य न हो या जहाँ निष्कर्ष ऐसा हो जिस पर कोई भी व्यक्ति बुद्धिमत्ता और निष्पक्षता से कार्य करते हुए उन निष्कर्षों पर न पहुँच सकता हो, और जब तक विभागीय प्राधिकारी द्वारा पहुँचे गए निष्कर्ष का समर्थन करने के लिए कुछ साक्ष्य मौजूद हैं, तब तक उसे कायम रखा जाना है।"

17. तर्कों पर विचार करने और अभिलेख के अवलोकन के पश्चात यह न्यायालय संतुष्ट है कि विभागीय कार्यवाही में कोई मूलभूत अनियमितता या अवैधता नहीं है और इसके अतिरिक्त विभागीय कार्यवाही में न्यायिक समीक्षा की शक्तियों का प्रयोग करते हुए यह न्यायालय अपीलीय न्यायालय के रूप में कार्य नहीं करता है।

18. उपर्युक्त के दृष्टिगत इस न्यायालय को अपीलार्थी के इस पहले तर्क में कोई सार (गुण) नजर नहीं आता है कि प्रक्रियागत अनियमितता/अवैधता के कारण विभागीय जाँच दूषित हो गई है।

19. जहाँ तक रिट न्यायालय द्वारा पारित आदेश की शुद्धता से संबंधित दूसरे बिंदु का संबंध है, अभिलेख से यह संकेत मिलता है कि अपीलार्थी विभाग के उच्च

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

प्राधिकारियों के विरुद्ध आरोप और प्रत्यारोप लगाने में लिप्त रहा है। अभिलेख से यह भी संकेत मिलता है कि अपीलार्थी ने बार-बार बेतुके और तुच्छ (फालतू) आरोप लगाते हुए कई रिट याचिकाएँ दाखिल की हैं और परिणामस्वरूप याचिकाएँ खारिज कर दी गईं।

20. नागरिक उड्डयन विभाग ने इस न्यायालय के समक्ष दाखिल अपने प्रतिशपथ पत्र (काउंटर एफिडेविट) के प्रस्तर-15 में अपीलार्थी के पिछले आचरण के संबंध में एक सारांश दिया है। इसमें रिट याचिका संख्या 7191 (एस/एस) वर्ष 2002 में रिट न्यायालय द्वारा पारित कई आदेशों का भी संदर्भ दिया गया है, जिसमें अपीलार्थी ने राज्य के नागरिक उड्डयन विभाग के पूर्व-महानिदेशक के विरुद्ध आरोप लगाने के अतिरिक्त इस न्यायालय के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के विरुद्ध भी आरोप लगाए हैं।

21. अपीलार्थी ने दंड प्रक्रिया संहिता (सीआरपीसी) की धारा 340 सपठित धारा 195 के अंतर्गत आवेदन प्रस्तुत किए थे, जिसमें राज्य के नागरिक उड्डयन विभाग के पूर्व-महानिदेशक के विरुद्ध जाँच प्रारम्भ करने की प्रार्थना की गई थी, जिसे खारिज कर दिया गया था। अपीलार्थी ने रिट याचिका संख्या 2163 (एम/बी) वर्ष 2002 भी दाखिल की थी जिसमें कानपुर स्थित सरकारी फ्लाइटिंग सेंटर के प्राधिकार से संबंधित अभिलेख को तलब करने के लिए राहत मांगी गई थी। पुनः उपर्युक्त याचिका में गंभीर और आधारहीन आरोप लगाए गए थे और इस न्यायालय की एक समन्वय पीठ ने दिनांक 05.02.2018 के आदेश के माध्यम से याचिका को यह संज्ञान लेते हुए खारिज कर दिया कि याचिकाकर्ता अर्थात् इस प्रकरण का अपीलार्थी स्वतंत्रता का दुरुपयोग कर रहा था और चूँकि वह एक बर्खास्त कर्मचारी था, इसलिए न्यायालय ने किसी भी प्रकार का हर्जाना अधोरोपित करने से परहेज किया।

22. जो भी हो अभिलेख से मात्र यही बात सामने आती है कि सेवा से हटाए जाने के बाद अपीलार्थी ने स्वयं को एक व्हिसलब्लोअर (भंडाफोड़ करने वाले) के रूप में

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

पेश करने का प्रयास किया है और विभाग के उच्च अधिकारियों के विरुद्ध आरोप लगाए हैं तथा न्यायालय को भी नहीं बखशा है।

23. इस न्यायालय की एक अन्य समन्वय पीठ ने दिनांक 06.04.2016 के अपने आदेश में अपीलार्थी की रिट याचिका संख्या 7137 (एम/बी) वर्ष 2016 को 10,000/- रुपये का हर्जाना अधिरोपित करते हुए खारिज कर दिया था, जिसमें अपीलार्थी ने न्यायालय के विरुद्ध आधारहीन आरोप लगाए थे। तथ्यों को छिपाने दस्तावेजों को तलब करने और लगाए गए दुर्भावनाओं के मुद्दे पर विभिन्न स्तरों पर रिट न्यायालय द्वारा विचार किया गया है और अपीलार्थी द्वारा किए गए सभी प्रयासों को तुच्छ और प्रेरित पाया गया तथा परिणामस्वरूप खारिज कर दिया गया।

24. प्रकरण के इस पहलू पर रिट न्यायालय द्वारा विशेष रूप से रिट न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 17.02.2021 के आदेश के प्रस्तर 6 से 10 में भी विचार किया गया है। यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि अपीलार्थी के विरुद्ध पारित पूर्ववर्ती आदेशों का संज्ञान लेते हुए रिट न्यायालय द्वारा जिस सामग्री पर विचार किया गया है, उन्हें आगे चुनौती नहीं दी गई है और वे अंतिम रूप ले चुके हैं। यह स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि अपीलार्थी निराधार और अनुचित मुद्दे उठाने की आदत में है।

25. तथ्यों को छिपाना विभाग के अधिकारियों की मनमानी कार्रवाई, नागरिक उड्डयन विभाग के पूर्व-महानिदेशक के विरुद्ध आरोप तथा विभाग के अधिकारियों के विरुद्ध जाँच की मांग करना और उनके कामकाज जैसे मुद्दे जो अपीलार्थी द्वारा उठाए गए थे, पर पहले ही विचार किया जा चुका है और उन्हें खारिज कर दिया गया है। याचिकाकर्ता ने अपने बहनोई के माध्यम से एक जनहित याचिका संख्या 863 (एम/बी) वर्ष 2003 दाखिल करवाकर जनहित याचिका की प्रक्रिया का भी दुरुपयोग किया, जिसमें विभाग में भ्रष्टाचार के आरोप उठाए गए थे जिसे दिनांक 11.03.2003 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था। इसी प्रकार के आधार को उठाते हुए याचिकाकर्ता द्वारा दाखिल एक अन्य जनहित याचिका

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

संख्या 2163 (एम/बी) वर्ष 2016 भी दिनांक 05.02.2018 के आदेश द्वारा खारिज कर दी गई थी। अपीलार्थी ने न्यायिक संस्था की छवि को धूमिल करते हुए और विभाग के वरिष्ठ अधिकारियों के विरुद्ध आरोप लगाते हुए एक पुस्तक तक छपवा ली थी। उपर्युक्त सामग्री प्रत्यर्थीगण द्वारा दाखिल प्रतिशपथ पत्र में अभिलेख पर मौजूद है।

26. अपीलार्थी ने अपने विरुद्ध पारित आरोपों और दंडात्मक आदेश को विधिक तथा ठोस आधार पर चुनौती देने के बजाय, विभाग के अधिकारियों के विरुद्ध अंधाधुंध आरोप लगाने का सिलसिला प्रारम्भ कर दिया है मानो कि उन पर जाँच की जा रही हो। अपीलार्थी ने दंड की मात्रा पर कोई तर्क प्रस्तुत नहीं किया है और इस प्रकार संपूर्ण सामग्री के साथ-साथ दिनांक 04.12.2002 को सेवा से हटाने का आदेश पारित होने से पूर्व और उसके बाद भी रिट याचिका के निस्तारण तक अपीलार्थी के आचरण को ध्यान में रखते हुए तथा एक समग्र दृष्टिकोण अपनाते हुए रिट याचिका को खारिज कर दिया गया है।

27. हाल ही में सर्वोच्च न्यायालय ने भारत संघ एवं अन्य बनाम मनगोबिंद सामंतराय, 2022 एससीसी ऑनलाइन एससी 284 के मामले में प्रस्तर-9 में यह टिप्पणी की है:-

"कदाचार का आरोप सिद्ध हो जाने के बाद दंड की मात्रा विवेकाधीन क्षेत्र के अंतर्गत और निर्णय लेने वाले प्राधिकारी की एकमात्र शक्ति है। ऐसी विवेकाधीन शक्ति न्यायिक हस्तक्षेप की सीमा के अंतर्गत आती है यदि उसका प्रयोग ऐसे तरीके से किया जाता है जो त्रुटि के अनुपात में अत्यधिक असमान है, क्योंकि संवैधानिक न्यायालय न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करते हुए अपीलीय प्राधिकारी की भूमिका ग्रहण नहीं करते हैं। रिट अधिकारक्षेत्र विधि की त्रुटियों, प्रत्यक्ष अन्याय या प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन की ओर ले जाने वाली प्रक्रियागत त्रुटियों को सुधारने की सीमाओं तक सीमित है, बी.सी. चतुर्वेदी बनाम भारत संघ, (1995) 6 एससीसी 749, जब निर्णय विकृतियों से ग्रस्त पाया जाता है तब भी उनमें हस्तक्षेप किया जाता है, प्रवीण कुमार बनाम भारत संघ,

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

(2020) 9 एससीसी 471, दंड की मात्रा के प्रश्न पर न्यायिक समीक्षा की शक्ति का प्रयोग करने वाला न्यायालय यह जाँच कर सकता है कि क्या प्राधिकारी एक विवेकशील नियोक्ता रहा है और उसने कदाचार के माप, परिमाण तथा अंश और अन्य सभी प्रासंगिक परिस्थितियों को ध्यान में रखा है तथा अप्रासंगिक मामलों को बाहर किया है, चेयरमैन-सह-प्रबंध निदेशक, कोल इंडिया लिमिटेड बनाम मुकुल कुमार चौधरी, (2009) 15 एससीसी 620, दंड की मात्रा के संदर्भ में यह विचार करने के लिए इन पहलुओं की परीक्षा की जाती है कि क्या निर्णय लेने की प्रक्रिया में कोई त्रुटि है। आरोपित दंड की मात्रा के गुणदोष पर न्यायालय तब तक हस्तक्षेप नहीं करेंगे जब तक कि दंड देने में विवेक का प्रयोग इस अर्थ में विकृत न हो कि लगाया गया दंड अत्यधिक असमान है।"

28. उपर्युक्त चर्चा के प्रकाश में अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत किए गए मनमानेपन के तत्व महत्वहीन हो जाते हैं और यह नहीं कहा जा सकता है कि रिट न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त लिखित तर्कों के अवलोकन से यह संकेत मिलता है कि वही मुद्दे उठाए गए हैं जिन पर पहले ही चरण में ठोस और उपयुक्त कारणों से विचार किया जा चुका है और उन्हें खारिज किया जा चुका है तथा ऐसे आदेश अंतिम हो चुके हैं। यहाँ तक कि सिबी मैथ्यूज (उपर्युक्त) के मामले पर अपीलार्थी द्वारा किया गया विश्वास भी गलत है और इसका वर्तमान मामले पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। अपीलार्थी को अपने स्वार्थी उद्देश्यों के लिए न्यायिक कार्यवाही का दुरुपयोग करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और इसके अतिरिक्त अपीलार्थी पहले ही अधिवर्षिता की आयु प्राप्त कर चुका है, इस प्रकार, उपर्युक्त सभी कारणों से अपील गुणदोष से रहित होने के कारण खारिज किए जाने योग्य है।

29. उपर्युक्त चर्चा को देखते हुए, अपील खारिज की जाती है। यद्यपि तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, हर्जाने के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

8.3. यह और अधिक स्पष्ट है कि उपर्युक्त अपील में दिनांक 27.04.2022 को खंडपीठ द्वारा पारित निर्णय के विरुद्ध व्यथित महसूस करते हुए, याचिकाकर्ता द्वारा एक सिविल विविध पुनर्विलोकन आवेदन संख्या 122 वर्ष 2022 दाखिल किया गया था, जिसे दिनांक 25.08.2023 को खारिज कर दिया गया था।

8.4. उपर्युक्त पुनर्विलोकन याचिका में खंडपीठ द्वारा पारित दिनांक 25.08.2023 का आदेश इस प्रकार है:-

"1. न्यायालय ने श्री देवेन्द्र कुमार दीक्षित को व्यक्तिगत रूप से सुना है, जिन्होंने इस न्यायालय की एक खंडपीठ द्वारा विशेष अपील संख्या 255 वर्ष 2021 में माननीय मुख्य न्यायमूर्ति राजेश बिंदल (जो उस उस समय इस पद पर थे) तथा हम में से एक (माननीय जसप्रीत सिंह, न्यायमूर्ति) के साथ मिलकर पारित किए गए निर्णय और आदेश दिनांक 27.04.2022 के पुनर्विलोकन की प्रार्थना करते हुए यह पुनर्विलोकन-आवेदन दाखिल किया है।

2. दिनांक 16.05.2023 के आदेश के माध्यम से, यह प्रकरण इस पीठ को नामित किया गया था और इसी के दृष्टिगत न्यायालय ने तात्कालिक पुनर्विलोकन-आवेदन पर सुनवाई की है।

3. पुनर्विलोकन-याची ने स्वयं मुख्य रूप से यह आधार उठाया है कि विशेष अपील का निर्णय करते समय, याची द्वारा रिट याचिका तथा विशेष अपील दोनों में जो मुद्दा उठाया गया था, वह यह था कि सेवा से हटाने का आदेश दुर्भावनापूर्ण और त्रुटिपूर्ण था क्योंकि जिस व्यक्ति के बारे में यह कहा जाता है कि उसने उक्त आदेश पर हस्ताक्षर किए थे, वह उक्त तिथि पर विभाग में तैनात नहीं था। यह आग्रह किया गया है कि एक आईएस अधिकारी श्री प्रदीप शुक्ला का विभाग से स्थानांतरण कर दिया गया था और इस न्यायालय के समक्ष दिनांक 08.03.2023 का एक जाली एवं मनगढ़ंत प्रभार प्रमाणपत्र (चार्ज सर्टिफिकेट) प्रस्तुत किया गया है।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

4. यह भी आग्रह किया गया है कि विभाग द्वारा न्यायालय के समक्ष दिनांक 15.05.2015 का एक फर्जी एवं जाली मनगढ़ंत व्यक्तिगत शपथ-पत्र भी प्रस्तुत किया गया था और इन सभी मुद्दों पर विचार नहीं किया गया है जो कि अभिलेख के मुख पर प्रकट त्रुटि है और इस प्रकार पुनर्विलोकन-आवेदन स्वीकार किए जाने योग्य है।

5. न्यायालय ने स्वयं पुनर्विलोकन याची के तर्कों पर विचार किया है और अभिलेख के अवलोकन से यह संकेत मिलता है कि याची द्वारा उठाया गया मुद्दा कोई नया मुद्दा नहीं है अपितु उसने इस मुद्दे को न केवल उस रिट याचिका में उठाया है जिससे विशेष अपील संख्या 255 वर्ष 2021 उत्पन्न होती है अपितु अन्य रिट याचिकाओं में भी उठाया है।

6. यह ध्यान रखना प्रासंगिक होगा कि पुनर्विलोकन-याची ने रिट याचिका संख्या 7191 (एस/एस) वर्ष 2002 में उपर्युक्त मुद्दों को उठाया था जिसमें विभाग ने अपने प्रतिशपथ पत्र (काउंटर एफिडेविट) में पुनर्विलोकन-याची के पिछले आचरण के साथ-साथ उन कई आदेशों का भी संदर्भ दिया था जो उक्त रिट याचिकाओं में पारित किए गए थे, जिसे रिट न्यायालयों तथा विशेष अपील दोनों द्वारा संज्ञान में लिया गया था।

7. न्यायालय ने पुनर्विलोकन-याची द्वारा दाखिल की गई संख्या 2163 (एम/बी) वर्ष 2016 नामक एक अन्य रिट याचिका का भी संज्ञान लिया था, जिसमें विभाग के साथ-साथ इस न्यायालय की खंडपीठ के विरुद्ध भी कुछ आरोप लगाए गए थे और उक्त रिट याचिका को भी दिनांक 05.02.2018 को खारिज कर दिया गया था। तथ्यों को छिपाने दस्तावेजों को तलब करने और दुर्भावनाओं से संबंधित मुद्दे का प्रयास भी पुनर्विलोकन-याची द्वारा रिट याचिका संख्या 7173 वर्ष 2016 के माध्यम से किया गया था जिसे भी खारिज कर दिया गया था।

8. यह कहने की आवश्यकता नहीं है, इन सभी पहलुओं पर रिट न्यायालय द्वारा विचार किया गया है और विशेष अपील संख्या 255 वर्ष 2021 का निर्णय करते समय इस न्यायालय द्वारा भी इसका संज्ञान लिया गया है और यह उस आदेश

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

में भी झलकता है जिसका पुनर्विलोकन चाहा गया है। विचाराधीन आदेश के प्रस्तर संख्या 23 से 25 का संदर्भ देना सार्थक होगा जिसमें इस पहलू का संज्ञान लिया गया है।

9. उठाए गए मुद्दे पर विचार करने के साथ-साथ विशेष अपील में तथा रिट न्यायालय द्वारा भी पारित निर्णय में उपर्युक्त प्रस्तरों का संज्ञान लेते हुए, यह न्यायालय संतुष्ट है कि स्वयं पुनर्विलोकन-याची अभिलेख से स्पष्ट रूप से प्रकट कोई भी त्रुटि इंगित करने में असमर्थ रहा है अपितु मामले की गुणदोष के आधार पर पुनः सुनवाई कराने का प्रयास किया जा रहा है जो कि पुनर्विलोकन में अनुमेय नहीं है (देखिए राम साहू एवं अन्य बनाम विनोद कुमार रावत एवं अन्य, 2020 एससीसी ऑनलाइन एससी 896)।

10. उपर्युक्त कारणों से यह न्यायालय संतुष्ट है कि पुनर्विलोकन आवेदन पूर्ण रूप से योग्यता से रहित है और तदनुसार खारिज किया जाता है। तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, हर्जाने के संबंध में कोई आदेश नहीं होगा।"

8.5. अभिलेख से यह भी स्पष्ट है कि रिट याचिका संख्या 7137 (एम/बी) वर्ष 2016 (देवेंद्र कुमार दीक्षित बनाम भारत संघ व अन्य) को न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग के रूप में 10,000/- रुपये के हर्जाने के साथ खारिज कर दिया गया था। इसके पश्चात रिट याचिका संख्या 2163 वर्ष 2016 को भी 05.02.2018 को खारिज कर दिया गया था।

8.6. रिट याचिका संख्या 2163 (एम/बी) वर्ष 2016 में पारित दिनांक 05.02.2018 का आदेश इस प्रकार है:

"याची श्री देवेंद्र कुमार दीक्षित, जो स्वयं उपस्थित हुए हैं, को सुना। यह याचिका श्री देवेंद्र कुमार दीक्षित द्वारा स्वयं व्यक्तिशः दाखिल की गई है, जो न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुए और स्वयं मामले पर बहस की। हमने रिट याचिका के शपथ-पत्र के साथ संलग्न फोटोग्राफ का अवलोकन किया है और पाया कि प्रकरण पर बहस करने वाला व्यक्ति वही व्यक्ति है जिसने शपथ-पत्र की शपथ ली है। हमने

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

उत्तर प्रदेश राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री जे.एन. माथुर को भी सुना है।

इस रिट याचिका में निम्नलिखित अनुतोष माँगा गया है:-

(i) विपरीत पक्षकारों को यह आदेश या निर्देश देने वाली परमादेश प्रकृति की एक रिट, आदेश या निर्देश जारी किया जाए कि वे वर्ष 2000-2001 के वित्तीय वर्ष के लिए गवर्नमेंट फ्लाइंग ट्रेनिंग सेंटर, कानपुर के प्राधिकार रजिस्टर से संबंधित अभिलेखों को तलब करें, जिसकी मांग पहले ही 05.12.2002 को ए.सी.एम.-III / जाँच अधिकारी से न्याय हित में की जा चुकी है क्योंकि यह एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है परन्तु उन्होंने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया।

(ii) विपक्षी को यह आदेश या निर्देश देने वाली परमादेश प्रकृति की एक रिट, आदेश या निर्देश जारी किया जाए कि वे याचिकाकर्ता द्वारा 04.10.2002 को उत्तर प्रस्तुत करने के पश्चात रिट याचिका संख्या 4806 (एस/एस) वर्ष 2002 में दिनांक 16.09.2002 को पारित आदेश के संबंध में माननीय उच्च न्यायालय, लखनऊ खंडपीठ को एक अनुपालन रिपोर्ट प्रस्तुत करें।

(iii) विपक्षी को यह आदेश या निर्देश देने वाली परमादेश प्रकृति की एक रिट, आदेश या निर्देश जारी किया जाए कि नागरिक उड्डयन विभाग के उच्च पदस्थ अधिकारियों की सी.बी.आई. जाँच का निर्देश दिया जाए, जिसे आवेदक द्वारा अपने दिनांक 19.05.2001 के आवेदनों के माध्यम से इंगित और प्रस्तुत किया गया था, वह हमारे समक्ष सही मानसिक स्थिति में नहीं थे। अभिलेख से यह पता चलता है कि इससे पहले उन्होंने अपने अधिवक्ता के माध्यम से एक याचिका दाखिल करवाई थी जिसमें ऐसे ही मुद्दे शामिल थे और उक्त रिट याचिका, जिसका संख्यांक रिट याचिका संख्या 863 (एम/बी) वर्ष 2003 था, इस न्यायालय द्वारा दिनांक 11.03.2003 के निर्णय के माध्यम से खारिज कर दी गई थी। हमने उक्त निर्णय का अवलोकन किया है और हम पाते हैं कि इस तथ्य का एक विशिष्ट संदर्भ है कि उक्त रिट याचिका यहाँ के याचिकाकर्ता के इशारे पर दाखिल की गई

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

थी। इस रिट याचिका में उठाए गए मुद्दों पर भी उसमें विचार किया गया था और आरोपों में कोई सच्चाई नहीं पाई गई थी।

याचिकाकर्ता को 04.12.2002 को सेवा से बर्खास्त कर दिया गया था, जिसे उसने अलग से चुनौती दी है।

इसके अतिरिक्त हम पाते हैं कि इस रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान उसने एक अन्य रिट याचिका संख्या 7137 (एम/बी) वर्ष 2016; देवेंद्र कुमार दीक्षित बनाम भारत संघ व अन्य दाखिल की, जिसे 10,000/- रुपये के हर्जाने के साथ न्यायालय की प्रक्रिया के दुरुपयोग के रूप में भी खारिज कर दिया गया था। मामले को सुनने और अभिलेख का अवलोकन करने के पश्चात, हमारा यह विचार है कि यह एक तुच्छ रिट याचिका है और न्यायालय की प्रक्रिया का स्पष्ट दुरुपयोग है। वास्तव में अभिवचन न केवल अस्पष्ट और निराधार हैं, अपितु इसके अतिरिक्त वे याचिकाकर्ता हेतु याचिका दाखिल करने का कोई वाद-हेतु भी प्रकट नहीं करते हैं। इसे जनहित याचिका के रूप में दाखिल नहीं किया गया है। हमने राज्य का प्रतिशपथ पत्र भी देखा है, जिससे पता चलता है कि विभाग के विरुद्ध विभिन्न रिट याचिकाएँ दाखिल की गई हैं, जिनमें से कुछ को गुणदोष के आधार पर खारिज कर दिया गया है।

इसके अतिरिक्त हम पाते हैं कि रिट याचिका संख्या 7137 (एम/बी) वर्ष 2016 के खारिज होने के पश्चात याचिकाकर्ता उन न्यायाधीशों के विरुद्ध तुच्छ शिकायत दर्ज करने की हद तक चला गया, जिन्होंने उक्त याचिका का निर्णय किया था, जिसके आधार पर उसके विरुद्ध आपराधिक अवमानना का मामला दर्ज किया गया, जिसकी कार्यवाही चल रही है। यह अवमानना याचिका संख्या 1202 वर्ष 2016 है। श्री माथुर से संबंधित याचिकाकर्ता के कथन को अभिलिखित करने से हम अनिच्छुक थे, परन्तु हमने ऐसा इस कारण से किया क्योंकि श्री माथुर ने स्वयं इस बात पर बल दिया कि इसे लिखित रूप में दर्ज किया जाए ताकि हर कोई जान सके कि याचिकाकर्ता किस प्रकार का वादकारी है।

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।

उपर्युक्त चर्चा को देखते हुए, हम इस रिट याचिका को खारिज करते हैं क्योंकि यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत हस्तक्षेप के लिए उपयुक्त मामला नहीं है। भारी हर्जाना अधोरोपित करने से स्वयं को रोकने का हमारा एकमात्र कारण यह है कि याचिकाकर्ता एक बर्खास्त कर्मचारी है।"

9. उपर्युक्त तथ्यों और परिस्थितियों को देखते हुए, यह न्यायालय पाता है कि सेवा से हटाने का आदेश जिसे पहले चुनौती दी गई थी, और आक्षेपित आदेश, जिसे वर्तमान याचिका में चुनौती दी गई है, दोनों एक ही हैं। यह भली-भांति स्थापित है कि **इलाहाबाद उच्च न्यायालय के नियमों के अध्याय XXII के नियम 7** के अनुसार दूसरी याचिका अनुमति योग्य नहीं है।

10. उपर्युक्त टिप्पणियों के साथ वर्तमान याचिका भ्रामक होने के कारण **खारिज** की जाती है।

(न्यायमूर्ति राजीव सिंह)

12 जून, 2026

अर्पण

अस्वीकरण:

अनुवादित निर्णय वादी के समझने हेतु है और इसका किसी अन्य उद्देश्य के लिये प्रयोग नहीं किया जा सकता है। समस्त कानूनी और सरकारी उद्देश्यों हेतु, निर्णय का मूल संस्करण ही मान्य होगा।